2008:CGHC:2452:DB

प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

युगल पीठ : माननीय मुख्य न्यायाधीश श्री राजीव गुप्ता एवं माननीय न्यायाधीश श्री सुनील कुमार सिन्हा

रिट याचिका (सिविल)क्रमांक 1514/ 2008

मेसर्स लैंको अमरकंटक पावर प्राइवेट लिमिटेड

बनाम

साउथ ईस्टर्न कोलफील्ड्स लिमिटेड एवं दो अन्य

आदेश

सही/-

सुनील कुमार सिन्हा

न्यायाधीश

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

माननीय न्यायमूर्ति श्री राजीव गुप्ता

सही/-

मुख्य न्यायाधीश

आदेश हेतु दिनांक 17.10.2008

को सूचीबद्ध किया गया

सही/-

17.10.2008

2008:CGHC:2452:DB

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

कोरम: माननीय मुख्य न्यायाधीश श्री राजीव गुप्ता एवं माननीय न्यायाधीश श्री सुनील कुमार सिन्हा

रिट याचिका (सिविल) क्रमांक 1514/ 2008

याचिकाकर्ता : मेसर्स लैंको अमरकंटक पावर प्राइवेट लिमिटेड, द्वारा निदेशक (परियोजना) ए. पट्टाभिरामन, उम्र लगभग 61 वर्ष, पिता श्री टी.के. अनंतनारायण, लैंको अमरकंटक पावर प्राइवेट लिमिटेड, ग्राम- पठाड़ी, पोस्ट टिकेजा, जिला कोरबा, कॉर्पोरेट कार्यालय, प्लॉट संख्या 130, रोड संख्या 2, बंजारा हिल्स, हैदराबाद (आंध्रप्रदेश)

बनाम

उत्तरवादीगण : 1. साउथ ईस्टर्न कोलफील्ड्स लिमिटेड, द्वारा अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक, सीपत रोड, बिलासपुर (छ.ग.)

2. निदेशक (तकनीकी) (संचालन) साउथ ईस्टर्न कोल फील्ड्स, सीपत रोड, बिलासपुर (छ.ग.)

3. मुख्य महाप्रबंधक (बिक्री एवं विपणन) साउथ ईस्टर्न कोल फील्ड्स, सीपत रोड, बिलासपुर (छ.ग.)

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत रिट याचिका)

उपस्थिति:

याचिकाकर्ता की ओर से : श्री शांति भूषण और श्री प्रशांत जायसवाल, वरिष्ठ अधिवक्ता सहित श्री संजय के. पाठक, श्री हरप्रीत सिंह और श्री अजय मिश्रा, अधिवक्ता।

उत्तरवादीगण की ओर से : श्री विवेक तन्खा और डॉ. एन.के. शुक्ला, वरिष्ठ अधिवक्ता, सुश्री रितु मिश्रा, अधिवक्ता।

आदेश

18.10.2008

न्यायालय का निम्नलिखित आदेश न्यायमूर्ति सुनील कुमार सिन्हा द्वारा पारित किया गया।

(1) याचिकाकर्ता कंपनी अधिनियम, 1956 के अंतर्गत पंजीकृत एक कंपनी है। इसने छत्तीसगढ़ के कोरबा के निकट, चरणों में, 1200 मेगावाट क्षमता का एक कोयला आधारित विद्युत संयंत्र स्थापित करने का प्रस्ताव रखा था। चूँकि कोयला आधारित विद्युत संयंत्र में कोयले की आवश्यकता अनिवार्य है, इसलिए याचिकाकर्ता ने साउथ ईस्टर्न कोल फील्ड्स लिमिटेड (संक्षेप में 'एसईसीएल'), जो कोल इंडिया लिमिटेड की एक सहायक कंपनी है, से संपर्क किया और अंततः याचिकाकर्ता और एसईसीएल

ने दिनांक 31.12.2005 को एक कोयला आपूर्ति करार किया। याचिकाकर्ता ने अभिवचन प्रस्तुत किया कि करार के खंड 2.4 में दी गई शर्त के अनुसार, उसने दिनांक 20.9.2005 को प्रथम 300 मेगावाट इकाई के लिए वित्तीय समापन प्राप्त कर लिया था और इसकी सूचना उत्तरवादियों/एसईसीएल को दिनांक 4.2.2006 के पत्र द्वारा दी गई थी। करार की शर्तों का पालन करते हुए, याचिकाकर्ता ने एसईसीएल द्वारा अपेक्षित अग्रिम राशि (ईएम) के रूप में 5,87,50,000/- रुपये और 1,77,50,000/- रुपये की बैंक प्रतिभूति दी और पावर प्लांट की स्थापना का कार्य चल रहा था। याचिकाकर्ता ने आगे तर्क दिया कि अचानक, दिनांक 27/28-2-2007 के पत्र द्वारा, एसईसीएल ने याचिकाकर्ता को सूचित किया कि करार कुछ आधारों पर समाप्त किया जा सकता है, जो इस प्रकार हैं:

(क) एसईसीएल को हस्ताक्षर तिथि से एक वर्ष के भीतर/इसके होने के एक सप्ताह के भीतर संयंत्र के वित्तीय समापन की सूचना प्राप्त नहीं हुई है (खंड 2.3 और 2.4 देखें);

(ख) उसे हस्ताक्षर तिथि से एक वर्ष के भीतर संयंत्र के संबंध में सभी आवश्यक स्वीकृतियां, अनुमोदन, अनुज्ञप्तियां, पर्यावरणीय स्वीकृति सहित सहमति की सूचना प्राप्त नहीं हुई है (खंड 2.3 बी देखें);

(ग) उसे हस्ताक्षर तिथि से एक वर्ष के भीतर अभिबंधन अग्रिम के लिए बैंक प्रतिभूति प्राप्त नहीं हुई है (खंड 2.6 बी देखें) और

(घ) उसे वित्तीय समापन के 30 दिनों के भीतर "चार महीने की अवधि" के बारे में सूचना प्राप्त नहीं हुई है (खंड 4.3 बी देखें), (यह जोड़ा जा सकता है कि वित्तीय समापन स्वयं दिनांक 31.12.2006 तक आवश्यक था)।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

याचिकाकर्ता ने दिनांक 28.2.2007 को एक पत्र द्वारा इसका उत्तर दिया, जिसमें याचिकाकर्ता ने उत्तरवादी को सूचित किया कि याचिकाकर्ता से मांगी गई संपूर्ण जानकारी उत्तरवादी को पहले ही दे दी गई थी, लेकिन एक बार फिर उसकी प्रतियां पत्र के साथ संलग्न की जा रही हैं। याचिकाकर्ता का तर्क यह है कि नोटिस के विरुद्ध प्रस्तुत उत्तर को विचारार्थ रख लिया गया और इस बीच, याचिकाकर्ता ने अभिबंधन अग्रिम के लिए जमा की जाने वाली बैंक प्रतिभूति की सही राशि के विषय में भी पूछा। एसईसीएल ने अपने पत्र दिनांक 7.3.2007 द्वारा याचिकाकर्ता को अभिबंधन अग्रिम के लिए 15,30,000,00/- रुपये की बैंक प्रतिभूति प्रस्तुत करने का निर्देश दिया, जिसे याचिकाकर्ता ने दिनांक 8.3.2007 को पूरा कर दिया। इसके बाद, दिनांक 8.1.2008 के एक पत्र के माध्यम से, याचिकाकर्ता ने एसईसीएल से जून, 2008 से कोयले की आपूर्ति प्रारंभ करने का अनुरोध किया, लेकिन उत्तरवादियों (एसईसीएल) ने अचानक दिनांक 29.2.2008 का एक आदेश याचिकाकर्ता को जारी कर दिया, जिसके द्वारा उसे सूचित किया गया कि दिनांक 31.12.2005 का करार समाप्त कर दिया गया है और ईएमडी/प्रतिभूति निक्षेप/अभिबंधन अग्रिम के लिए बैंक प्रतिभूति लागू कर दी गई है। इसी स्तर पर रिट याचिका प्रस्तुत की गई और दिनांक 31.12.2005 के करार को समाप्त करने वाले दिनांक 29.2.2008 के आदेश को रिट याचिका में चुनौती दी गई।

(2) याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री शांति भूषण ने दिनांक 28.2.2007 के पत्र (अनुलग्नक-पी/9) का संदर्भ देते हुए तर्क दिया कि एसईसीएल द्वारा दिनांक 27/28-2-2007 के पत्र में उठाए गए सभी आधारों को उन्हें पूरी तरह से समझाया गया था, लेकिन एसईसीएल ने पत्र की सामग्री पर कोई ध्यान नहीं दिया। उन्होंने तर्क प्रस्तुत किया कि एसईसीएल को सूचित किया गया था कि याचिकाकर्ता ने 300 मेगावाट इकाई के लिए दिनांक 20.9.2005 को वित्तीय समापन प्राप्त कर लिया है, जिसकी सूचना एसईसीएल को दिनांक 4.2.2006 को दी गई थी। याचिकाकर्ता ने परियोजना के लिए सभी आवश्यक अनुमोदन भी प्राप्त कर लिए थे और कोयला आपूर्ति करार पर हस्ताक्षर करते समय 7,65,00,000/- रुपये की बैंक प्रतिभूति भी प्रस्तुत की गई थी। याचिकाकर्ता कंपनी ने यह भी व्यक्त किया है कि कंपनी ने भुगतान अग्रिम की छूट के लिए अनुरोध करते हुए दिनांक 4.2.2006 को एक पत्र लिखा था हालाँकि, कंपनी जल्द से जल्द अभिबंधन अग्रिम के लिए बैंक प्रतिभूति प्रस्तुत करने के लिए तैयार है। चार महीने की अवधि के संबंध में, याचिकाकर्ता ने सूचित किया था कि परियोजना निर्माण में पर्याप्त प्रगति हुई है और 1 अप्रैल, 2008 से 31 जुलाई, 2008 तक की चार महीने की अवधि के दौरान कोयला भेजने की आवश्यकता होगी। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि करार की समाप्ति सार्वजनिक उपक्रम के प्राधिकारी द्वारा पारित एक मनमाना आदेश है, जो संविधान के अनुच्छेद 12 के अर्थ में 'प्रभुत्व' है और इसलिए संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(3) उत्तरवादियों की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री विवेक तन्खा ने संविदा को समाप्त करने के आधार को उचित ठहराते हुए मुख्य रूप से तर्क दिया कि दिनांक 31.12.2005 के करार में एक माध्यस्थम् खंड है और याचिकाकर्ता ने उक्त खंड में निहित प्रावधानों का आश्रय लिए बिना, संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत असाधारण क्षेत्राधिकार का आह्वान करते हुए इस न्यायालय की ओर रुख किया है, इसलिए, उपरोक्त के दृष्टिगत यह याचिका पोषणीय नहीं होगी। उन्होंने तर्क प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता ने यहां एक संविदा को संविदा के रूप में लागू करने और संविदा के नियमों और शर्तों को लागू करने की प्रार्थना के लिए रिट याचिका दायर की है, जिसे उच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित नहीं किया जा सकता है। उन्होंने तर्क प्रस्तुत किया कि यह भी अच्छी तरह से स्थापित है कि उच्च न्यायालय तथ्यों के विवादित प्रश्नों से जुड़ी रिट याचिका पर विचार नहीं करेगा, खासकर जब माध्यस्थम् का आश्रय लेने के माध्यम से वैकल्पिक उपचार याचिकाकर्ता के पास उपलब्ध है।

(4) हमारे समक्ष उठाया गया पहला प्रश्न यह है कि क्या मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर, संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत एक रिट याचिका दायर की जा सकती है या पक्षकारों के बीच हुए करार में विद्यमान माध्यस्थम् खंड के अनुसार याचिकाकर्ता का समाधान कहीं और है?

(5) क्षेत्राधिकार के मुद्दे पर बहस करते हुए, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री शांति भूषण ने सबसे पहले **<u>एलआईसी ऑफ इंडिया एवं एक अन्य बनाम कन्स्युमर एजुकेशन एवं अनुसंधान केंद्र एवं अन्य [(1995) 5 एससीसी 482)]</u>** के मामले में दिए गए सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का संदर्भ दिया।

उन्होंने हमें निर्णय के पैरा 24 से 29 तक का हवाला दिया, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पूर्व में निर्णीत मामलों का हवाला दिया गया है। वे इस प्रकार हैं:

5.1 **<u>द्वारकादास मारफतिया एंड संस बनाम बॉम्बे बंदरगाह के न्यासी बोर्ड [(1989) 3 एससीसी 293]</u>** मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि "निगम को एक निश्चित संवैधानिक विवेक के अनुसार कार्य करना चाहिए और क्या उन्होंने ऐसा किया है, यह निगमों के आचरण से स्पष्ट होना चाहिए। लोक प्राधिकरण की प्रत्येक गतिविधि तर्कों से प्रेरित और जनहित द्वारा निर्देशित होनी चाहिए। लोक प्राधिकरण द्वारा विवेक या शक्ति के सभी प्रयोग इसी मानक के आधार पर परखे जाने चाहिए। उस मामले में, जब पत्तन न्यास के स्वामित्व वाली इमारत को भाडा अधिनियम से छूट दी गई थी, तो विकास के लिए किरायेदारी समाप्त करने पर, जब कब्जा लेने की मांग की गई थी, अनुच्छेद 226 के तहत इसे चुनौती दी गई थी कि पत्तन न्यास की कार्यवाही मनमानी थी और किरायेदारी समाप्त करने से कोई जनहित नहीं सधेगा। उस संदर्भ में, सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि संविदात्मक संबंधों में भी न्यायालय इस बात की अनदेखी नहीं कर सकता कि लोक प्राधिकरण में संवैधानिक विवेक होना चाहिए, इसलिए कोई भी व्याख्या मनमानी कार्यवाही से बचने के लिए होनी चाहिए, अन्यथा प्राधिकरण को साम्राज्यवाद के रूप में फलने-फूलने की अनुमति मिल जाएगी। "सार्वजनिक प्राधिकरण की गतिविधि चाहे जो भी हो, उसे अनुच्छेद 14 के परीक्षण पर खरा उतरना होगा और न्यायिक पुनर्विलोकन मनमाने ढंग से की गई कार्यवाही को अमान्य घोषित करती है।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

5.2 **<u>महाबीर ऑटो स्टोर्स बनाम इंडिया ऑयल कॉर्पोरेशन [(1990) 3 एससीसी 752]</u>** में, सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया था कि "राज्य अपनी कार्यकारी शक्ति का प्रयोग करते हुए, व्यक्ति के साथ संविदात्मक संबंध स्थापित करता है, तो उस शक्ति के प्रयोग पर अनुच्छेद 14 लागू होगा। राज्य या उसके तंत्र की कार्यवाही को अनुच्छेद 14 के तहत रोका जा सकता है। उनकी कार्यवाही विधि के शासन के अधीन होनी चाहिए। यदि संविदा करने या न करने के मामले में भी सरकारी कार्यवाही तर्कसंगतता की कसौटी पर खरी नहीं उतरती है, तो वह अनुचित होगी। तर्क का नियम और मनमानी व भेदभाव के विरुद्ध नियम, निष्पक्षता के नियम, नैसर्गिक न्याय, नागरिकों के साथ व्यवहार करते समय राज्य/तंत्र द्वारा किसी स्थिति या कार्यवाही में लागू होने वाले विधि के शासन का हिस्सा हैं। इसलिए, यद्यपि नागरिकों के अधिकार संविदात्मक अधिकारों की प्रकृति के हैं, फिर भी संविदा करने या न करने के निर्णय का तरीका, विधि और उद्देश्य, प्रासंगिकता और तर्कसंगतता, निष्पक्षता, न्याय, समानता और गैर-भेदभाव और नैसर्गिक न्याय की कसौटी पर न्यायिक पुनर्विलोकन के अधीन हैं।। यह सर्वविदित है कि "विधि में दुर्भावना" हो सकती है। सर्वोच्च न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया है कि ऐसे एकाधिकार या अर्ध-एकाधिकार में सार्वजनिक प्राधिकरण का कार्य चाहे जो भी हो, उसे विधि के शासन के

अधीन होना चाहिए और उसके पीछे तर्क होने चाहिए तथा उसे अनुच्छेद 14 की कसौटी पर खरा उतरना चाहिए।

5.3 **कुमारी श्रीलेखा विद्यार्थी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, [(1991) 1 एससीसी 212]** में सर्वोच्च न्यायालय ने पैरा 22 में इंगित किया है कि "निजी पक्ष केवल अपने व्यक्तिगत हित से चिंतित होते हैं, लेकिन सार्वजनिक प्राधिकरण से सार्वजनिक भलाई और सार्वजनिक हित में कार्य करने की अपेक्षा की जाती है। प्रत्येक कार्यवाही का प्रभाव सार्वजनिक हित पर भी पड़ता है। यह सार्वजनिक विधि का दायित्व लागू करता है और उस चरित्र के साथ राज्य या उसके साधन द्वारा किए गए संविदाओं को प्रभावित करता है: (एससीसी पृ. 236-37, कंडिका 22)

> "यह अलग बात है कि संविदात्मक दायित्वों के क्षेत्र में आने वाले विवादों के संबंध में न्यायिक पुनर्विलोकन का दायरा अधिक सीमित हो सकता है और संदिग्ध मामलों में, पक्षकारों को विशुद्ध रूप से संविदात्मक विवादों के न्यायनिर्णयन हेतु प्रदान किए गए उपचारों का आश्रय लेकर उनके अधिकारों के न्यायनिर्णयन के लिए भेजा जा सकता है। हालाँकि, जहाँ तक अनुच्छेद 14 के उल्लंघन के आधार पर यह आरोप लगाकर चुनौती दी जाती है कि आक्षेपित कार्य मनमाना, अनुचित या अविवेकपूर्ण है, यह तथ्य कि विवाद संविदात्मक दायित्वों के क्षेत्र में भी आता है, राज्य को अनुच्छेद 14 की मूलभूत आवश्यकताओं का पालन करने के उसके दायित्व से मुक्त नहीं करेगा। इस सीमा तक, दायित्व प्रत्येक मामले में अनिवार्य रूप से सार्वजनिक प्रकृति का होता है, चाहे उसके अतिरिक्त कोई अन्य अधिकार या दायित्व हो या न हो। एक अतिरिक्त संविदात्मक दायित्व, राज्य के किसी भी कार्य में अनुच्छेद 14 के तहत गैर-मनमानेपन की गारंटी के दावेदार को वंचित नहीं कर सकता।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

5.4 **भारतीय खाद्य निगम बनाम कामधेनु कैटल फीड इंडस्ट्रीज, [(1993) 1 एससीसी 71]** (एससीसी के पृष्ठ 76, कंडिका 8) में सर्वोच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि:

> "ऐसी स्थिति में, किसी नागरिक की मात्र युक्तियुक्त या विधिसम्मत प्रत्याशा, अपने आप में एक पृथक प्रवर्तनीय अधिकार नहीं हो सकती है, लेकिन उस पर विचार न करने और उसे उचित महत्व न देने से निर्णय मनमाना हो सकता है, और इस प्रकार एक विधिसम्मत प्रत्याशा पर उचित विचार करने की आवश्यकता, गैर-मनमानापन के सिद्धांत का एक भाग बनती है, जो विधि के शासन का एक आवश्यक सहवर्ती है। प्रत्येक विधिसम्मत प्रत्याशा एक सुसंगत कारक है निष्पक्ष निर्णय लेने की प्रक्रिया में जिस पर उचित विचार की आवश्यकता होती है।"

5.5 **स्टर्लिंग कंप्यूटर्स लिमिटेड - बनाम - एम एंड एन पब्लिकेशन्स लिमिटेड, [(1993) 1 एससीसी 445]** (एससीसी पृष्ठ 464, कंडिका 28) में, सर्वोच्च न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया था कि "यहां तक कि वाणिज्यिक संविदाओं में भी जहां एक सार्वजनिक तत्व होता है, यह आवश्यक है कि सुसंगत विचारों को ध्यान में रखा जाए और असंगत विचारों को त्याग दिया जाए।"

5.6 **भारत संघ बनाम ग्राफिक इंडस्ट्रीज कंपनी, [(1994) 5 एससीसी 398]** में सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया था कि "यहां तक कि संविदात्मक मामलों में भी सार्वजनिक प्राधिकारियों को निष्पक्ष रूप से कार्य करना होगा; और यदि वे ऐसा करने में विफल रहते हैं तो अनुच्छेद 226 के तहत दृष्टिकोण हमेशा स्वीकार्य होगा क्योंकि यह संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन होगा।"

5.7 **जनरल एश्योरेंस सोसाइटी लिमिटेड बनाम चंदमुल्ल जैन, [एआईआर 1966 एससी 1644]** में, सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि "राज्य, उसकी संस्था, कोई भी सार्वजनिक प्राधिकरण या व्यक्ति जिसके कार्यों में सार्वजनिक विधि तत्व या सार्वजनिक चरित्र का प्रतीक चिन्ह हो, न्यायिक पुनर्विलोकन के अधीन हैं और ऐसी कार्यवाही की वैधता का परीक्षण अनुच्छेद 14 के आधार पर किया जाएगा। अनुच्छेद 226 के तहत शक्ति का प्रयोग करते समय, न्यायालय किसी दिए गए मामले में तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर संविदा से उत्पन्न विवादों का न्यायनिर्णयन करने में सतर्क रहेगा। सार्वजनिक विधि उपचार और निजी विधि क्षेत्र के बीच अंतर को सटीकता से नहीं बताया जा सकता है। विवाद की गतिविधि या दायरे और प्रकृति का पता लगाने के लिए प्रत्येक मामले की उसके अपने तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर जांच की जानी चाहिए। सार्वजनिक विधि और निजी विधि उपचार के बीच का अंतर अब कम हो गया है। अपीलकर्ताओं के कार्य सार्वजनिक चरित्र के हैं और जीवन बीमा संविदा में जनता को आमंत्रित करने वाली उपयुक्त तालिका में उल्लिखित नियमों और शर्तों के संबंध में उनके प्रस्तावों में जनहित तत्व की छाप है। यह कोई विशुद्ध और सादा निजी विधि विवाद नहीं है, जिसमें सार्वजनिक तत्व का कोई चिन्ह न हो। इसलिए, सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि यह मानने में कोई संकोच नहीं होगा कि रिट याचिका तालिका 58 (टर्म पॉलिसी) में निर्धारित शर्तों की वैधता का परीक्षण करने के लिए विचारणीय है और पक्षकार को सिविल मुकदमे में भेजने की आवश्यकता नहीं है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(6) श्री शांति भूषण ने **एबीएल इंटरनेशनल लिमिटेड एवं एक अन्य बनाम भारतीय निर्यात ऋण गारंटी निगम लिमिटेड एवं अन्य (2004) 3 एससीसी 553** के निर्णय का अवलंब लिया है। संविदात्मक मामलों में रिट याचिका की पोषणीयता के संबंध में इस मामले में निर्धारित सिद्धांत इस प्रकार हैं:

(क) किसी उपयुक्त मामले में, किसी संविदात्मक दायित्व से उत्पन्न किसी राज्य या राज्य के किसी साधन के विरुद्ध रिट याचिका पोषणीय है।

(ख) केवल इसलिए कि तथ्य के कुछ आक्षेपित प्रश्न विचारार्थ उठते हैं, नियमानुसार सभी मामलों में रिट याचिका पर विचार करने से इनकार करने का आधार नहीं हो सकता।

(ग) मौद्रिक दावे के परिणामी अनुतोष से संबंधित रिट याचिका भी पोषणीय है।

(7) इसके बाद उन्होंने कुमारी श्रीलेखा विद्यार्थी (पुर्वोक्त) के मामले में दिए गए सर्वोच्च न्यायालय के फैसले का अवलंब लिया और दृढतापूर्वक कहा कि यदि यह दिखाया जाता है कि राज्य या उसके साधन का कार्य मनमाना है और इसलिए संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन है, तो इस प्रश्न के बावजूद कि क्या कोई अतिरिक्त अधिकार, संविदात्मक या वैधानिक, यदि कोई हो, पीड़ित व्यक्तियों के लिए उपलब्ध है, तो आक्षेपित कार्य को निरस्त करने में कोई बाधा नहीं हो सकती है।

(8) संविदात्मक मामलों में माध्यस्थम् खंड की उपलब्धता के संदर्भ में, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने **हरबंसलाल साहनिया एवं एक अन्य बनाम इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन लिमिटेड एवं अन्य {(2003) 2 एससीसी 107}** के निर्णय का का अवलंब लिया। सर्वोच्च न्यायालय ने उक्त निर्णय में अभिनिर्धारित किया कि वैकल्पिक उपचार की उपलब्धता द्वारा रिट क्षेत्राधिकार के बहिष्कार का नियम विवेकाधिकार का नियम है, न कि बाध्यता का। यह प्रतिपादित किया गया कि किसी उपयुक्त मामले में, वैकल्पिक उपचार की उपलब्धता के बावजूद, उच्च न्यायालय कम से कम तीन आकस्मिक परिस्थितियों में अपने रिट क्षेत्राधिकार का प्रयोग कर सकता है:

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(i) जहाँ रिट याचिका में किसी भी मौलिक अधिकार के प्रवर्तन की मांग की गई हो;

(ii) जहाँ नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों की विफलता हो; या

(iii) जहाँ आदेश या कार्यवाही पूर्णतः क्षेत्राधिकार से बाहर हो या किसी अधिनियम की शक्तियों को चुनौती दी गई हो।

उक्त मामले में, करार में एक माध्यस्थम् खंड था और उच्च न्यायालय ने यह विचार व्यक्त किया कि चूंकि माध्यस्थम् का आश्रय लेने से संबंधित एक उपचार था, इसलिए रिट याचिका पोषणीय नहीं होगी। सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि मामले के तथ्य और परिस्थितियां दर्शाती हैं कि याचिकाकर्ताओं का लाइसेंस एक असंगत और अस्तित्वहीन तथ्य पर भरोसा करके निरस्त किया गया था और याचिकाकर्ताओं का मामला पहले दो आकस्मिक परिस्थितियों की प्रयोज्यता को आकर्षित करता है। सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि याचिकाकर्ताओं की डीलरशिप, जो उनकी रोजी-रोटी थी, एक असंगत और अस्तित्वहीन कारण से समाप्त हो गई, इसलिए, ऐसी परिस्थितियों में, याचिकाकर्ताओं को माध्यस्थम् कार्यवाही शुरू करने की आवश्यकता के लिए विवश करने के बजाय उच्च न्यायालय द्वारा स्वयं अनुतोष दी जानी चाहिए थी।

(9) हमने याचिकाकर्ता के अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत तर्कों पर ध्यानपूर्वक विचार किया है। हमें इसमें कोई संदेह नहीं है कि यदि राज्य या उसके साधन या प्राधिकरण या निकाय, जो अनुच्छेद 12 के अर्थ में राज्य है, का कोई कार्य अनुच्छेद 14 के समानता खंड का उल्लंघन करता है, तो रिट याचिका स्वीकार्य होगी, भले ही मामले का सार संविदात्मक हो। लेकिन यदि तथ्य और विधि के आक्षेपित प्रश्न उठाए जाते हैं जिनकी गहन जाँच की आवश्यकता होती है, और हो सकता है कि कुछ मौखिक या दस्तावेजी साक्ष्य की भी आवश्यकता हो, तो अनुच्छेद 226 के तहत प्रस्तुत रिट याचिका के अलावा अन्य उपचार का उपयोग करना उचित होगा।

(10) एबीएल इंटरनेशनल लिमिटेड (पूर्वोक्त) के मामले में, उपरोक्त सिद्धांतों को निर्धारित करते हुए, सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत एक रिट याचिका की स्थिरता के बारे में आपत्ति पर विचार करते समय, न्यायालय को इस तथ्य को ध्यान में रखना चाहिए कि अनुच्छेद 226 के तहत विशेषाधिकार रिट जारी करने की शक्ति प्रकृति में पूर्ण है और उच्च न्यायालय को मामले के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, एक रिट याचिका पर विचार करने या न करने का विवेकाधिकार है। न्यायालय ने स्वयं पर कुछ प्रतिबंध लगाए हैं और एक विशेषाधिकार रिट जारी करने के लिए उच्च न्यायालय का यह पूर्ण अधिकार सामान्य रूप से अन्य उपलब्ध उपचारों के बहिष्कार के लिए न्यायालय द्वारा प्रयोग नहीं किया जाएगा जब तक कि राज्य या उसके साधन की ऐसी कार्यवाही मनमानी और अनुचित न हो ताकि अनुच्छेद 14 के जनादेश का उल्लंघन हो या अन्य विधिसम्मत और वैध कारणों से, जिसके लिए न्यायालय उक्त क्षेत्राधिकार का प्रयोग करना आवश्यक समझता है। उक्त निर्णय में संविदात्मक मामलों में रिट याचिका पर विचार करने के संबंध में सिद्धांत निर्धारित करते हुए, सर्वोच्च न्यायालय ने **उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य बनाम ब्रिज एंड रूफ कंपनी (इंडिया) लिमिटेड, एआईआर 1996 एससी 3515** के मामले में दिए गए निर्णय का उल्लेख किया है, जिसमें निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया था:

> "इसके अलावा, विचाराधीन संविदा में एक खंड शामिल है जो अन्य बातों के साथ-साथ माध्यस्थम् के संदर्भ में विवादों के निपटारे का प्रावधान करता है। मध्यस्थ तथ्यात्मक प्रश्नों के साथ-साथ विधि के प्रश्नों पर भी निर्णय कर सकते हैं। जब संविदा स्वयं संविदा से उत्पन्न विवादों के निपटारे का एक तरीका प्रदान करता है, तो कोई कारण नहीं है कि पक्षकार उस उपचार का पालन न करें और उसे अपनाएँ नहीं और अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय के असाधारण क्षेत्राधिकार का आह्वान न करें। इस मामले में एक प्रभावी वैकल्पिक उपचार का अस्तित्व, जो संविदा में ही प्रदान किया गया है - न्यायालय के लिए अनुच्छेद 226 के तहत अपने असाधारण क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने से इनकार करने का एक अच्छा आधार है।"

(11) सर्वोच्च न्यायालय ने एबीएल इंटरनेशनल लिमिटेड के निर्णय में स्पष्ट रूप से कहा कि चूंकि ब्रिज एंड रूफ कंपनीज केस (पूर्वोक्त) में माध्यस्थम् का एक खंड था, इसलिए न्यायालय ने उक्त मामले में संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उपचार लागू करने से इनकार कर दिया। जबकि, एबीएल के

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

मामले में, संविदा में ऐसा कोई माध्यस्थम् खंड नहीं था और इस संदर्भ में, सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि यह सर्वविदित है कि यदि किसी विवाद के पक्षकार माध्यस्थम् द्वारा अपने विवाद को निपटाने के लिए सहमत हो गए हैं और यदि उस संबंध में कोई समझौता है, तो न्यायालय माध्यस्थम् के माध्यम से उपचार का आह्वान किए बिना किसी अन्य उपचार का आश्रय लेने की अनुमति नहीं देगा, जब तक कि विवाद के दोनों पक्ष विवाद समाधान के किसी अन्य तरीके पर सहमत न हों।

(12) इसलिए, संविदात्मक मामलों के क्षेत्र में एक रेखा खींची जा सकती है और उन्हें दो समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है। पहला, जिसमें पक्षकारों के बीच माध्यस्थम् का करार होता है और दूसरा, जिसमें ऐसा कोई करार नहीं होता है और विवादों का निपटारा सिविल न्यायालयों द्वारा किया जा सकता है। श्री शांति भूषण द्वारा उद्धृत लगभग सभी मामलों में, हरबंसलाल (पूर्वोक्त) के मामले को छोड़कर, कोई माध्यस्थम् करार नहीं हुआ था और ऐसी स्थिति में, रिट याचिकाओं पर विचार किया गया और उन्हें पोषणीय माना गया।

(13) हरबंसलाल के मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने "उपयुक्त मामलों में" जैसे शब्दों का प्रयोग किया है। इन शब्दों का बहुत महत्व है। इन शब्दों के अतिरिक्त, सर्वोच्च न्यायालय ने तीन आकस्मिक परिस्थिति दी हैं, जिनका उल्लेख हमने ऊपर किया है। यदि हम हरबंसलाल के मामले में उल्लिखित आकस्मिक परिस्थितियों के संदर्भ में इस मामले की जाँच करें, तो हम पाते हैं कि इस मामले में कोई भी आकस्मिक परिस्थिति मौजूद नहीं है, क्योंकि किसी भी मौलिक अधिकार के प्रवर्तन का प्रश्न ही नहीं उठता, न ही नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों की विफलता है और न ही वर्तमान ऐसा कोई मामला है जहाँ आदेश या कार्यवाही के पूर्णतः अधिकार क्षेत्र से बाहर होने का प्रश्न है और न ही किसी अधिनियम की वैधता को चुनौती दी गई है। हरबंसलाल का मामला अलग है क्योंकि सर्वोच्च न्यायालय ने पाया कि प्रचलित तथ्यों और परिस्थितियों में यह एक उपयुक्त मामला है क्योंकि पहली दो आकस्मिक परिस्थिति आकर्षित पाई गईं और सर्वोच्च न्यायालय ने यह देखा कि यह एक ऐसा मामला था जिसमें याचिकाकर्ताओं की रोजी-रोटी एक असंगत और अस्तित्वहीन कारण से समाप्त हो गई और शायद केवल इन सभी प्रचलित परिस्थितियों में, सर्वोच्च न्यायालय ने इसे माध्यस्थम् खंड के तहत उपलब्ध उपचार पारित करके रिट क्षेत्राधिकार का प्रयोग करने के लिए एक उपयुक्त मामला पाया।

(14) **हरबंसलाल (पूर्वोक्त) के निर्णय को बाद में श्रीमती संजना एम. विग बनाम हिंदुस्तान पेट्रो कॉर्पोरेशन लिमिटेड, एआईआर 2005 एससी 3454** के मामले में उद्धृत किया गया। यह तर्क दिया गया कि केवल माध्यस्थम् खंड के अस्तित्व के आधार पर किसी पीड़ित व्यक्ति के लिए सार्वजनिक विधि उपचार उपलब्ध नहीं माना जा सकता है; हालांकि राज्य के हाथों मौलिक अधिकार का उल्लंघन होने का आरोप है। यह भी तर्क दिया गया कि घटनाओं की श्रृंखला से, ऐसा प्रतीत होता है कि उत्तरवादी ने करार की शर्तों के कथित उल्लंघन के मामले में अपीलकर्ता की ओर से हुई चूक को क्षमा कर दिया था और केवल उस ओर से जारी नोटिस के अनुसार कथित बकाया राशि के भुगतान पर जोर

दिया था और हरबंसलाल के मामले पर मजबूत भरोसा रखा गया था। मामले में उपरोक्त तर्कों पर, सर्वोच्च न्यायालय ने कंडिका 16 और 17 के माध्यम से निम्नानुसार टिप्पणी की:

> "16. हालांकि, हम यह देख सकते हैं कि पीठ ने **मेसर्स टिटलागढ़ पेपर मिल्स लिमिटेड - बनाम - उड़ीसा राज्य विद्युत बोर्ड और ,एक अन्य, ((1975) 2 एससीसी 436} और मेसर्स बिसरा स्टोन लाइम कंपनी लिमिटेड - बनाम - उड़ीसा राज्य विद्युत बोर्ड और एक अन्य, (एआईआर 1976 एससी 127)** में पहले के निर्णयों पर ध्यान नहीं दिया। हालांकि, इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि इस तरह के विवेकाधीन क्षेत्राधिकार का प्रयोग कब किया जाना चाहिए या कब करने से इनकार किया जाना चाहिए, इस प्रश्न का निर्धारण प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए, जिसके लिए कोई कठोर नियम नहीं बनाया जा सकता है।
>
> "17. इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने **हिमाचल प्रदेश राज्य बनाम गुजरात अंबुजा सीमेंट लिमिटेड (2005 एआईआर एससीडब्लू 3727) में हरबंसलाल शानिया (पूर्वोक्त)** का संदर्भ देते हुए यह निर्णय दिया था:
>
> > "संविधिक उपचारों की समाप्ति के सिद्धांत के दो सर्वमान्य अपवाद हैं। पहला, जब फोरम के समक्ष कार्यवाही किसी ऐसे विधिक प्रावधान के अंतर्गत की जाती है जो अधिकार क्षेत्र से बाहर है, तो पीड़ित पक्षकार के लिए यह विकल्प उपस्थित है कि वह कार्यवाही को इस आधार पर रद्द करने के लिए उच्च न्यायालय में आवेदन करे कि वह अक्षम है, और पक्षकार को कार्यवाही पूरी होने तक प्रतीक्षा करने के लिए बाध्य नहीं किया जाएगा। दूसरा, यह सिद्धांत तब लागू नहीं होता जब आक्षेपित आदेश नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन करते हुए दिया गया हो। हम यह भी जोड़ सकते हैं कि जहाँ कार्यवाही अपने आप में विधिक प्रक्रिया का दुरुपयोग है, तो वहाँ उच्च न्यायालय उचित मामले में रिट याचिका पर विचार कर सकता है।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(15) हम यह नोट कर सकते हैं कि दिनांक 29.2.2008 के आक्षेपित आदेश द्वारा पक्षकारों के बीच पूर्व करार की समाप्ति के पश्चात, याचिकाकर्ता और एसईसीएल ने दिनांक 25 जून, 2008 को पुनः कोयला आपूर्ति करार किया है और उन्होंने उसी दिन करार के एक पार्श्व पत्र पर हस्ताक्षर भी किए हैं, जिसमें दिनांक 31.12.2005 के करार की समाप्ति और इस न्यायालय द्वारा दिनांक 30.4.2008 के आदेश में दिए गए निर्देश से संबंधित तथ्यों को अभिलेख में रखा गया है और एसईसीएल ने इसके अनुपालन में याचिकाकर्ता के विद्युत संयंत्र को कोयला आपूर्ति पहले ही प्रारंभ कर दी है। इसलिए, अब निर्णय हेतु प्रश्न अग्रिम राशि/प्रतिभूति निक्षेप/अभिबंधन अग्रिम से संबंधित राशि की वापसी का है। एसईसीएल ने याचिकाकर्ता द्वारा संविदा के उल्लंघन का आरोप लगाया है और समाप्ति आदेश में लिए गए आधारों को तथ्यात्मक रूप से अपने कथनों के साथ विस्तृत रूप से प्रस्तुत किया है। करार का माध्यस्थम् खंड इस प्रकार है:

11.2 माध्यस्थम्

इस करार में अन्यथा प्रावधान के अलावा, इस करार या इसकी व्याख्या से उत्पन्न या इससे संबंधित किसी भी असहमति, विवाद या दावे, इस करार से संबंधित या इस करार में प्रस्तावित किसी भी व्यवस्था या इस करार के उल्लंघन, समाप्ति या अमान्यता का निपटारा विशेष रूप से और अंतिम रूप से माध्यस्थम् द्वारा किया जाएगा। यह स्पष्ट रूप से समझा और सहमति व्यक्त की गई है कि कोई भी असहमति, विवाद या प्रतिविरोध जिसका पक्षों के बीच समाधान नहीं हो सकता, जिसमें बिना किसी सीमा के इस करार की व्याख्या से संबंधित कोई भी मामला शामिल है, किसी भी पक्ष द्वारा चुने जाने पर माध्यस्थम् के लिए प्रस्तुत किया जाएगा, चाहे उसका परिमाण कुछ भी हो, विवाद की राशि कुछ भी हो या ऐसा असहमति, विवाद या प्रतिविरोध किसी न्यायालय या मध्यस्थ न्यायाधिकरण द्वारा समाधान के लिए उचित या उपयुक्त माना जाता हो या नहीं। यदि कोई भी पक्ष मध्यस्थों को यह निर्धारित करने के लिए अनुरोध प्रस्तुत करता है कि करार की समाप्ति कब और कैसे हुई थी, तो इस करार के तहत प्रत्येक पक्ष के दायित्व और अधिकार, जिनमें संदेह से बचने के लिए, खंड 9.2(ए) में निर्धारित प्रत्येक पक्ष के अधिकार शामिल हैं, जारी रहेंगे और पूरी तरह से लागू रहेंगे। माध्यस्थम् कार्यवाही की अवधि तब तक जारी रहेगी जब तक कि करार की समाप्ति की घटना और समय का निर्णय नहीं दे दिया जाता।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

करार का अगला खंड, अर्थात 11.3, माध्यस्थम् नियमों का प्रावधान करता है। हमारा मानना है कि यह पक्षकारों के अधिकारों की पूरी तरह से रक्षा करता है और पक्षकारों के बीच उठे विवादों के निपटारे के लिए एक कारगर उपचार है। हम पाते हैं कि एसईसीएल द्वारा संविदा की समाप्ति को उचित ठहराने के लिए याचिकाकर्ता के दावों के विरुद्ध उठाए गए सभी तर्क, करार के विभिन्न खंडों का हवाला देते हुए, माध्यस्थम् करार द्वारा कवर किए गए प्रतीत होते हैं और मामले के मौजूदा तथ्यों और परिस्थितियों में, विशेष रूप से बाद के विकास के प्रकाश में, जिसके द्वारा पक्षकारों के बीच एक और ईंधन आपूर्ति करार किया गया है और कोयले की आपूर्ति शुरू हो गई है और किसी भी सार्वजनिक हित को हानि होने की संभावना नहीं है, जो याचिकाकर्ता की बिजली परियोजना के कार्य के संभावित ठहराव के कारण था और हरबंसलाल (पूर्वोक्त) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कोई भी आकस्मिकता इस मामले में मौजूद नहीं है, कोई कारण नहीं है कि याचिकाकर्ता को माध्यस्थम् का उपचार नहीं करना चाहिए, जिसे उसने करार के खंड 11.2 के तहत गंभीरता से स्वीकार किया है और अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय के असाधारण क्षेत्राधिकार को लागू करने पर जोर दिया है ताकि उन प्रश्नों को निर्धारित किया जा सके जो वास्तव में माध्यस्थम् करार का विषय-वस्तु बनाते हैं।

(16) इसलिए, हम इस रिट याचिका में गुण-दोष के आधार पर कोई आदेश पारित करने से इनकार करते हैं और मानते हैं कि मौजूदा तथ्यों और परिस्थितियों में, संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत एक रिट याचिका मान्य नहीं होगी और याचिकाकर्ता का उपचार ऊपर उल्लिखित माध्यस्थम् खंड के अनुसार कहीं और निहित है।

(17) अब हम याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री शांति भूषण द्वारा उठाए गए तकनीकी प्रश्न पर विचार करेंगे कि एक बार उच्च न्यायालय ने सुनवाई के लिए याचिका पर विचार कर लिया है, इसलिए, इस पर गुण-दोष के आधार पर निर्णय लिया जाना चाहिए। इस संबंध में, उन्होंने सर्वोच्च न्यायालय के तीन निर्णयों का उल्लेख किया है, अर्थात् **एल. हृदय नारायण - बनाम - आयकर अधिकारी, बरेली, [एआईआर 1971 एससी 33}; एस.जे.एस. बिजनेस एंटरप्राइजेज (प्रा.) लिमिटेड - बनाम - बिहार राज्य और अन्य, {(2004) 7 एससीसी 166} और दुर्गा एंटरप्राइजेज (प्रा.) लिमिटेड और एक अन्य - बनाम - प्रमुख सचिव, उत्तर प्रदेश सरकार। और अन्य, {(2004) 13 एससीसी 665**.}

(18) एल. हृदय नारायण के मामले में, याचिकाकर्ता ने धारा 35 के तहत पारित आदेश के विरुद्ध आयकर अधिनियम के तहत उपचार लागू करने के बजाय, उच्च न्यायालय में एक याचिका दायर की और उच्च न्यायालय ने उस याचिका पर विचार किया। उक्त स्थिति में, सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि यदि उच्च न्यायालय ने उनकी याचिका पर विचार नहीं किया होता, तो वे आयुक्त के पास पुनरीक्षण याचिका ले सकते थे, क्योंकि जिस तिथि को याचिका दायर की गई थी, उस समय अधिनियम की धारा 33-क द्वारा निर्धारित अवधि समाप्त नहीं हुई थी। इसी स्थिति में, सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि उच्च न्यायालय द्वारा रिट याचिका को पोषणीय न मानकर खारिज करना उचित नहीं था, जिस पर विचार किया गया था और गुण-दोष के आधार पर सुनवाई की गई थी। यह मामला अलग है क्योंकि रिट याचिका के तहत चुनौती एक वैधानिक आदेश को दी गई थी जिसकी वैधता की जांच पुनरीक्षण प्राधिकारी या उच्च न्यायालय द्वारा की जा सकती थी।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(19) एस.जे.एस. बिज़नेस एंटरप्राइजेज (पी) लिमिटेड के मामले में तथ्यात्मक विवरण बिल्कुल अलग है। उक्त मामले में, बेशक, अपीलकर्ता ने वाद दायर करने के 2 सप्ताह बाद वाद वापस ले लिया था और अपीलकर्ता ने केवल अनुच्छेद 226 के तहत अपने उपचारों को जारी रखने का विकल्प चुना और उच्च न्यायालय के समक्ष तर्क भी पूरी हो गईं और उचित समय बीत चुका है। यह इस स्थिति में है, सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि जब मामला सुनवाई के लिए परिपक्व था और योग्यता के आधार पर रिट याचिका का निर्धारण करने के लिए आवश्यक सभी तथ्य न्यायालय के समक्ष थे, और जब न्यायालय का यह विचार नहीं था कि रिट याचिका अन्यथा पोषणीय नहीं थी, तो याचिका का निर्णय गुण-दोष के आधार पर किया जाना चाहिए था। यह माध्यस्थम् करार वाला मामला नहीं था। पक्षकार ने पहले सिविल न्यायालय में जाने का विकल्प चुना और फिर यह रिट न्यायालय में आया है और रिट न्यायालय ने यह विचार नहीं बनाया है कि रिट याचिका अन्यथा पोषणीय नहीं थी। वर्तमान मामले में, हमारा यह मत है कि रिट याचिका विचारणीय नहीं है, इसलिए, उपरोक्त तर्क के आधार पर याचिका पर निर्णय लेने का प्रश्न ही नहीं उठता।

(20) अंतिम निर्णय अर्थात दुर्गा एंटरप्राइजेज (पी) लिमिटेड के मामले में तथ्य पूरी तरह से अलग हैं। उक्त मामले में, रिट याचिका पिछले 13 वर्षों से लंबित थी और फिर इसे वैकल्पिक उपचार के अस्तित्व

के आधार पर निपटाया गया था। औचित्य की जांच करते हुए, सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि उच्च न्यायालय ने रिट याचिका पर विचार किया था जिसमें दलीलें भी पूरी थीं, उसे सिविल वाद में पक्षकारों को फिर से नियुक्त करने के बजाय मामले का गुण-दोष के आधार पर निर्णय करना चाहिए था। फिर से, हम कहेंगे कि यह माध्यस्थम् करार से संबंधित मामला भी नहीं था, जो पक्षकारों के बीच एक निर्वाचित उपचार हो सकता था। इसलिए, यह याचिकाकर्ता के लिए भी मददगार नहीं है। इसके अलावा, प्रारंभिक चरण में याचिका पर विचार करने के कई कारण हो सकते हैं, जिसमें एक विशेष कारण के रुप में न्यायालय की बुद्धिमत्ता भी शामिल है जब वास्तविक आपत्तियां अभिलेख में नहीं हैं, खासकर याचिका की स्थिरता के संदर्भ में। लेकिन, जब जवाब दाखिल हो जाते हैं और इस संबंध में विधिक आपत्तियाँ ली जाती हैं और पक्षकारों के प्रस्तुतीकरण पर उचित विचार किया जाता है, तो न्यायालय बाद में इस निष्कर्ष पर पहुँचती है कि मामले के मौजूदा तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए रिट याचिका पोषणीय नहीं होगी या कई अन्य कारणों से सुनवाई में तेजी लाना संभव नहीं होगा। ऐसे में न्यायालय यह रुख अपनाने के लिए बाध्य नहीं हो सकती कि वह याचिका पर गुण-दोष के आधार पर निर्णय करे, भले ही वह अन्यथा पोषणीय न हो। हमारी सुविचारित राय में, यह विधि की सही स्थिति नहीं होगी। यदि रिट याचिका पोषणीय नहीं थी और गुण-दोष के आधार पर सुनवाई में तेजी लाना संभव नहीं था, तो याचिका को गुण-दोष के आधार पर कोई आदेश पारित किए बिना खारिज किया जाना चाहिए।

(21) इस मामले के इस दृष्टिकोण से, हम रिट याचिका की स्वीकार्यता के आधार पर उठाई गई आपत्ति को सारवान मान रहे हैं।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(22) पूर्वोक्त कारणों से, याचिका खारिज किए जाने योग्य है और तदनुसार खारिज की जाती है।

(23) पक्षकारों को माध्यस्थम् करार के खंड 11.2 और 11.3 के अनुसार मध्यस्थों के समक्ष अपने विवाद उठाने की स्वतंत्रता होगी।

(24) आदेश जारी करने से पहले, हम यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि इस आदेश में की गई किसी भी टिप्पणी को मामले के गुण-दोष पर की गई अभिव्यक्त राय नहीं माना जाएगा। पक्षकारों द्वारा उठाए गए विवाद का मध्यस्थों द्वारा विधि के अनुसार उसके स्वयं गुण-दोष के आधार पर न्यायनिर्णयन किया जाएगा।

(25) वाद व्यय के संबंध में कोई आदेश नहीं किया जा रहा है।

सही/-
मुख्य न्यायाधीश

सही/-
सुनील कुमार सिन्हा
न्यायाधीश

अस्वीकरणः हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु **निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।**

Translated By ..... Aniruddha Shrivastava, Advocate

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur